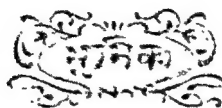


ADARACHAND DUNGOAN SETHI
JAIN M. S. A. R. Y.
BIKANER RAJPUTANA.

[illegible][illegible]

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

(मैवाह) में रचा था । आप के बनाये बहुत से व्याख्यान, कथा-
और पदवचन जोड़ आदि हैं । बाण्य के हिमाच से यदि देखा
जाय तो वास्तव में यह अयूर्व है । जिन सभ्यताओं ने आपके बनाये
माग्यादी भाषा के मूलग्रंथों को पढ़ा होगा, यही उनका प्रवृत्त
रसास्वादन पर लगे होंगे ।

मेद है कि माग्यादी बोलों में लिखे हुए जैन आचार्यों की
रचनाओं पर हिन्दी भाषा भाषियों को दृष्टि नहीं तक नहीं पड़ी
है । Comparative Study (तुलनामूलक पठन) के
लिसे हिन्दी विद्वानों को चाहिए कि तेरे वंश आचार्य एवम्
साधुओं के बनाये हुए ग्रंथों को देखें । नाम वर धीमदु निम्न
ग्रन्थों एवम् धीमदुआचार्य इन ग्रंथ को भाव सम्यक् में, शब्द
गुणवत्तागुण्य में, एवं बाण्य के हिमाच से प्रत्येक हिन्दी तथा अन्य
भाषा के विद्वानों के देखने और लिखे भाव में पढ़न करने योग्य हैं ।

सुराज मेठ के पत्र में प्रसंगगत अनुदाहरण ने बड़ी साव-
धानी से जैन धर्म के मूल ग्रन्थों का विश्लेषण बताया है ।
भक्तिवा, सत्य, धर्मोप, एवम् एभिप्रवर्तित्व का भी उचित स्थान
में संक्षिप्त उल्लेख किया है । विष्णु प्रवचन के प्रभाव व गुण
वर्णन करने में जो लेखक ने ध्यानपूर्वक में प्रयत्न लेख्य बताया
है । भला है कि हिन्दी भाषा के विद्वान इस ग्रंथ का अनुचित
आदर वर लेखक प्रभाव का उल्लेख पढ़ावे, ताकि वे भवि-
ष्य में तेरे वंश आचार्यों के ग्रंथों का अनुदाहरण वर अन्य
कोई पुस्तक भी उपहार दे सकें । लेखक का प्रस्ताव का

— — — — —

... ..

[illegible]

लिए मैं बाबू रायचन्द जी सुराना का इतर हूँ, जिन्होंने मुझे भाव-भाग को उलभने सुलभाने में बड़ी सहायता दी है। भूमिका के लेखक बाबू छोगानल जी चोपड़ा, बी० ए० बी० एल० ने नोट लिखने में बड़ी मदद दी है अतः उनका इतर हूँ। चरित्र-मुद्रिका की शोभा बढ़ाने की इच्छा से, उपयुक्त स्थानों में, कई एक मासिकपत्रों तथा पुस्तकों से संग्रहीत, पद्यों का नगोता जड़ा गया है, अतः उनके स्वयितों के प्रति हननता प्रकाश करना अपना कर्तव्य समझता हूँ। साथ ही बाबू महालचन्द जी वयेद का भी मैं आभारी हूँ जिन्होंने मुझे ऐसी उपयोगी पुस्तक के लिखने का परामर्श दिया और उसे प्रकाशित किया।

ग्रन्थ संशोधन में कई एक अशुद्धियाँ रह गयी हैं पाठक उनके लिए क्षमा करेंगे।

तांग—उद्गाय (युलप्रान्त)	}	विनात -
शिवरात्रि—फाल्गुन, सं० १६८०		श्याम सुन्दर अवस्थी

उस मरी पड़े हैं जिसका सुझावना करने में सबबक बिलो भी देश
 का नाहित समर्थ नहीं हुआ। इन्हीं रसोनि में सुदर्शन करिब
 भी एक है, जिसका हिन्दो अनुवाद कराकर प्रकाशित करने का
 भी सुझाव दिनों में उपलब्ध हुआ था, क्योंकि प्रत्यक्ष के मतत्व
 को प्रदर्शित करने में यह प्रत्यक्ष अधिकारी है और आवश्यकता भी
 इस समय देखे हो प्रत्यक्ष को है, जो प्रत्यक्ष के मतत्व को प्रती-
 त्वादि द्वारा कर अनुवादों को करिब सुझाव में सहायक हो।
 उपलब्ध और प्रोत्साहन लेखकों द्वारा प्रकाशित होनि सुझाव
 दिनि 'मैत्र सुझाव' को उपलब्ध करिब सुझाव का हिन्दो
 अनुवाद करने के जिदो में, दिनि उपलब्ध सुझावों प्रत्यक्ष में
 अनुवाद बिलो पड़े हो हर्ष को दाह है कि प्रतीति उस मरी
 प्रतीति कर प्रतीति का हिन्दो प्रतीति प्रतीति प्रतीति।

सुखमयों भक्तुदासों मज्जनमें हैं और जो कुछ वह करी सकना
 करिष्ये मैं वहीं भक्तुदास दिवान, लेता हूँ मज्जनमें रह करी ;
 मज्जु सुखमय वह मज्जन हूँ कि जो है देवता ही मज्जु सुखमय
 मज्जनमें मज्जनमें हैं कुछ वसत मज्जन करी मज्जन में हूँ
 सुखमय सुख मज्जन में मज्जन मज्जन हैं मज्जन मज्जन मज्जन बा हूँ
 मज्जन मज्जनमज्जन ही है । मज्जन हूँ मज्जन मज्जन मज्जन ।

हम तुलना की तब हमने देखा कि अलग-अलग विधियों
वाली भी बहुत सी बातें हैं। हमने देखा कि हमारे देश में
है। और हमने देखा कि हमारे देश में बहुत सी बातें हैं।
हमने देखा कि हमारे देश में बहुत सी बातें हैं। हमने देखा कि
हमारे देश में बहुत सी बातें हैं। हमने देखा कि हमारे देश में
हमारे देश में बहुत सी बातें हैं। हमने देखा कि हमारे देश में

पुनः

नृसिंहचन्द्र चरित ।

विषय-सूची

(पहला अध्याय)

विषय—	पृष्ठ
१—रेणु और काल	१
२—सुदर्शन को सेठ की पदवी	५
३—दाम्पत्य प्रेम	६
४—कर्मों का भोग	७

(दूसरा अध्याय)

५—सेठ पर मोहित होना .. .	८
६—सेठ को धोखा देकर लाना .. .	११
७—कपिला को देख कर सेठ का बचड़ाना ..	१४
८—जी-नामन का त्याग	१६
९—सुदर्शन की खास .. .	१६
१०—कपिला का पञ्चाक्षराप .. .	१७
११—दूसरे के घर जाने का त्याग .. .	१८
१२—प्रिया-चरित्र और कुशीला बहिन	१९

[३]

३४—सवित्र कनौ का विन्तवन	७४
३५—दीन-सहायक देवताओं का आगमन	७५
३६—रूतों का सिंहासन	७८
३७—राज सेना का आवा	७९
३८—देवता और राज्यसेना का संगम	८०
४०—राजा सेठ की शरद आये	८१
४१—देवता की फटकार	८२
४२—राजा का छोट निशाद	८४
४३—राजा द्वारा सेठ का महोत्सव	८५
४४—सेठ का अपने घर आना	८७
४५—अमरा रानी का आत्मबल	८८

(छठवाँ अध्याय)

४६—सेठने सदन देने की लगी	८९
४७—साधु दयन	९१
४८—हर्षान का दूत मर	९२
४९—नरकार की नहिना	९३
५०—सेठने मनोरमा त आशा मंगी	९४

(सातवाँ अध्याय)

५१—दीक्षा की तज्जारी	९५
५२—सेठ का दीक्षित होना	९७
५३—मनोरमा की विनय	९८
५४—विहार और घर	१००
५५—साधु हर्षान का असन्तुष्ट बस	१०१
५६—शेखा आदिवा कनौ	१०२
५७—शेखा द्वारा उपमर्ग	१०३

[३]

३५—संघित कर्मों का विस्तार	७५
३६—पील-सहायक देवताओं का आगमन	७६
३७—एली का सिंहासन	७८
३८—राज सेना का घाया	७९
३९—देवता और राजसेना का संग्राम	८०
४०—राजा सेठ की शरण आये	८१
४१—देवता की पटकार	८२
४२—राजा का क्रोध निवारण	८४
४३—राजा द्वारा सेठ का महोत्सव	८५
४४—सेठ का अपने घर आना	८७
४५—ममया रानी का आत्मघात	८९

(छठवां अध्याय)

४६—सेठने समय जेन की ठानी	९५
४७—साधु दर्शन	९६
४८—सुदर्शन का पूज भव	९८
४९—नवकार की मर्दिमा	१०१
५०—सेठने मनोरमा स आशा भोगी	१०२

(सातवां अध्याय)

५१—दीक्षा की तयारी	१०६
५२—सेठ का दीक्षित होना	१०७
५३—मनोरमा की विनय	१०८
५४—विहार और सप	१०९
५५—साधु सुदर्शन का पुरान्त पास	११०
५६—शेषा भविष्य बनी	१११
५७—पेरया द्वारा उपसर्ग	११२

(तीसरा अध्याय)

११—वाटिका निर्माण	३३
१४—वाटिका में दर्शन लेना	३८
१२—कविता और अभवा की बलबोल.	३९
१३—अभवा की मेरु शिखर-सामना	४१
१०—परिवर्तना भाव की कविता	४२
१८—विनायकाने विरहीन कविता	४३
१६—भाव का प्रथम भाग	४४
२०—दार्शनिकों की धोखा	४५

(चौथा अध्याय)

२१—समयान में मेरु की बहा बाना	४६
२२—अभवा-दर्शनम भिन्न	४७
२३—दर्शन की दर्शन	४८
२४—समय लेने की शक्ति	४९
२५—मेरु का शुभ चिह्न	५०
२६—अभवा की शक्तिमत्त कथा	५१
२७—अभवा का प्रजापति	५२
२८—मेरु पर भूटा दोषासिद्ध	५३
२९—राजा की दृष्टि	५४
३०—प्रजा की पुकार	५५
३१—राजाने विभी की न दली	५६
३२—मेरु की गूँधी देने के सिद्धे में आना	५७
३३—समोरमा का विचार और प्रथ	५८

(पाँचवा अध्याय)

३४—अभवा राजी का प्रथम होना	५९
----------------------------	----

[३]

३५—सखि कनौ का बिलवन	७४
३६—पीत-सहायक देवताओं का आगमन	७६
३७—दूतों का सिंहासन	७८
३८—राज सेवा का आया	७९
३९—देवता और राजसेना का संघाम	८०
४०—राजा सेठ की शत्रु आये	८१
४१—देवता की छत्रकार	८२
४२—राजा का छेद निगराय	८४
४३—राजा द्वारा सेठ का महोत्सव	८५
४४—सेठ का करने घर आना	८७
४५—ममया रानी का आत्मघात	८९

(छठवां अध्याय)

४६—सेठने सधन देने की बातें	९५
४७—साधु दयन	९६
४८—हर्गन का दूध भर	९८
४९—बरकार की महिला	१०१
५०—सेठने मनोरमा से धांधला मांगी	१०३

(सातवां अध्याय)

५१—दीक्षा की तन्मारी	१०६
५२—सेठ का दीक्षित होना	१०७
५३—मनोरमा की विनय	१०९
५४—बिहार और तब	१०९
५५—साधु हर्गन का एहन्त वास	११०
५६—बेया भाविडा कनौ	१११
५७—बेया द्वारा हरमन	११२

[३]

३१—सचित्र कनौ का विस्तार	७४
३१—दीन-सहायक देवताओं का आचमन	७५
३२—रुसी का सिंहासन	७८
३३—राज सेवा का धारा	७९
३६—देवता और राजसेवा का संगम	८०
४०—राजा सेठ की दरद आने	८१
४१—देवता की छुटकार	८२
४२—राजा का छुट निवारद	८३
४३—राजा द्वारा सेठ का महोत्सव	८४
४४—सेठ का घरने घर जाना	८७
४८—अन्या रानी का आत्मघात	८९

(छठवां अध्याय)

४९—सेठने सचम प्रेने की बारी	९५
४७—साधु दण्ड	९६
४८—हरांग का रूप भव	९६
४९—नरकार की महिला	१०१
५०—सेठने मनोरमा से धावा मंगी	१०२

(सातवां अध्याय)

५१—दीक्षा की लम्पारी	१०६
५२—सेठ का दीक्षित होना	१०७
५३—मनोरमा की विनय	१०८
५४—विशार और हर	१०८
५५—साधु हरांग का दृष्टान्त बरत	११०
५६—येरा आरिडा बनी	१११
५७—येरा द्वारा हरमन	११३

सगरान्त उत्तम मेनिया
हंन प्रम्यायद.
दीफाने, (राजपुताणा.)

पहला अध्याय

जन्म और बाल्यकाल ।

देश और काल ।

प्राचीन कालमें, किसी समय भरतदेश के अङ्गदेशमें, इन्द्रपुरी के सरीखा चम्पा नामक एक नगर था। वहाँ पर उद्य जाति का, निर्मल कुलवाला, राजशिरोमणि, धार्मीवाहन नाम का राजा राज्य करता था। अप्सराओं को भात करनेवाली, सौन्दर्यमें सुराङ्ग-गाओं से बढ़ कर, अभया नाम की उत्तरी पटरानी थी। उस नगर के निवासी धर्म-कर्ममें बड़े प्रवीण तथा जिन धर्म के तत्त्वों के अच्छे ज्ञाता थे, शुद्धसाधुओं का आवागमन अधिक होने के

थोड़े दिन पश्चात् बर्षित पुरोहित से उनको निजता हुई।
 दोनों में कुछ बातचीत थी, तथा दूसरे से बड़े दिनचिन्तक थे। जब
 सुदर्शन रियासत के योग्य हुए तब अन्तर्गत में स्नातक की
 सुपुत्री मनेय्या से शाद, अच्छे लड़कों और सुन सुन में, बड़े
 बड़े-बड़े से शाद, रीति अनुसार धन खर्चोंने हुए, रियासत बर्षित
 शास्त्र किया। तत्पश्चात् निजमातृश्वर सुमुख परिवार वालों को
 मोहर बागदा और सब सज्जों को अती भक्ति मन्त्रुष्ट किया।
 तथा सुदर्शन की लकी मनेय्या लकी परिवार, शादक से शाद
 करने और और शास्त्र में मनेय्या तथा सुपाक दार देने में अन्तर्गत
 सुपाक थी। तथा उनके निज बर्षित पुरोहित की बर्षित शास्त्र
 रीति की रीति, सुपाक और सुपाक थी।

सुखार्थेन सो मेह सो पदारी ।

[illegible]

पत्नी का भोग ।

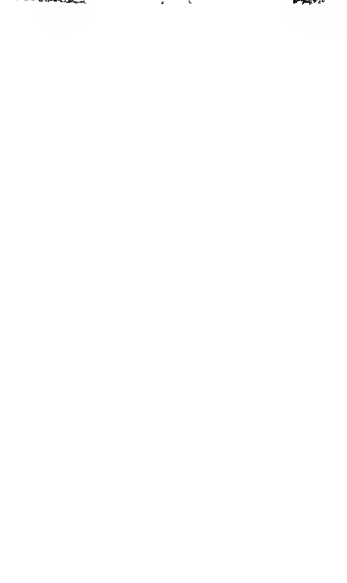
होगे संसार में बनें जितना है तो बनें निरुद्धमहाचार्य,
बनें पतनभूषणों से सुसज्जित होना है तो बनें चिन्मयों के निचे
संसार है, बनें साधुता और नीर उद्वेग है तो बनें दुःखों
मोक्ष पर भी ऐत न है यह सत्य, एतद्देव सत्यति का अभाव
है जो एक बौद्ध है के निचे भवका जितना है। यहाँ पर "जीसो
पानी पैसी पार उतरनी" की कहावत पूर्ववत् परिलक्ष्य होती
है। ऐतद्देव के अभाव, किसी मनुष्य को देव बन होना स्वागत
करने, ऐतद्देव के निचे दुःख भूते और किसी को देव बन मुँह
लिखने का भी निवेदने का गुण प्रकट करने है। बनें
एक + एक चिन्मयों के, सौंदर्य का अभाव करना है जो बनें
एक बन के, एक बनें को एक बन कहना है। बनें एक और
एक का अभाव है जो बनें जिस का दोष निरुद्ध सांद है जिसका
है। जिसके के अभाव में एक एक बनें की दुःख निरा करने है
बनें जिसका एक बनें को बनें कहने। बनें दुःख का अभाव
एक है जो बनें का अभाव को एक का एक बन है। एक दुःखों
को देव बन कहना है जो एक सत्य का एक दुःखों का निरा
करना है। एक सत्य के ऐतद्देव के अभाव का अभाव है, जो
एक सत्य सत्य के निचे को बनें सत्य। एक एक निरा
है जिसका अभाव अभाव दुःख है जो सत्य होना है जो एक
सत्य को एक सत्य का अभाव दुःख को अभाव है। एक सत्य
बनें एक सत्य बन बन बन है जो एक सत्य निरा है एक

10

काम बना रहित है, काम को काम करने का विधि है। यदि मैं
 कहा, वे ! कविता न मिले निमित्त कविता बनाने का देव बननी
 है, क्योंकि जाना देव बाद भी न वह न जान सकी कि मैं पुनः
 होतुं। यदि मुझ में कुछ भी पुनः काम जेन - ऐसा तो
 मुझ जेनी क्षमता करनी करनी हो जेन करने में मैं करी ब्रह्म
 रहता ! न केवल मैं जानता हो मैं करी, अथवा वे, दुर्गो हो नार
 कर भी मेरी काम परीक्षण कर रही है, जानेपर भी यदि मेरे ज्ञान
 का शान न हुआ तो अथवा हो न मुझ में है। क्या न करी जाननी
 कि यदि न इन्द्रादिक देव भी खो वे, हाथों को स्वागत कर
 चुके हैं। जिन में कुछ भी पुनः भाव होता है, वे तो खो वे
 गुलाम बन जाते हैं, मैं तो उनी रोहि के (देव के) पूज के
 मरता हूँ, जो गन्धर्व-रहित निष्कार होता है। मैंने तेरी सभी बातें
 ध्यान पूर्वक सुनी हैं, किन्तु एक पुनः भाव के अभाव से निरस्त
 होकर मजिज मन हो रहा है। अन्तु ! अब मुझे मेरे गृह जाने
 दे, मैं तेरी आशा को पूर्ति करने में अतन्त्र हूँ।

कपिला का पश्चात्ताप ।

कपिला सुदर्शन नेट की यह बातें सुन कर दुःखित हो लम्बी
 सांतें मने लगी। उसकी आशा-रत्न पर तुल्य की वृद्धि हो
 गयी। अब यह हाथ मत न कर पड़ानी बत निर धुननी है
 कि 'हाथ ! मेरी तो दोनों गयी—इच्छा की पूर्ति तो न हुई किन्तु
 लज्जा रहित हो गयी—मेरी निर्लज्जता सेठ पर प्रकट हो गयी, भाव



उत्पात दिन-रुत रात-चौमुला पड़ता है। गेट भी इस आगदा से निर्दिष्ट गिराफ्त हो गये; शान्त-घन पर उनका प्रगाढ़ प्रेम और भी प्रौढ़ हो गया।

त्रिया-चरित्र और कुशीला वर्णन ।

कशिला पड़ी ही दुष्टा है। हमारे पुष्करिणों, बाग़ की पालों तथा भीषत्म पूर्ण बाँतुल्लोको देस पर इस बात में मन्देह नहीं रह जाता कि कुशीला हर प्रकार के निन्दनीय कार्यों करने में समर्थ हो सकती है। प्रसन्न पर यहां कुछ ऐसी त्रियों का उल्लेख किया जाता है जिन्होंने अपने कर्णज्यों से यह मिरर पर दिया है कि नर्पिणी के दांत में, चींटी के मुँह में, और पिच्छू के केदा पंछ में ही विष होता है; किन्तु कुशीला स्त्री के सारे शरीर में विष ही विष भर है। त्रियों के अयगुणों की कदा अयर्ण्य है, इस बात को भी जिनैश्वर भगवान ने भी स्वीकार किया है। इनके अयगुणों का घारा-पार नहीं, मगर यहां लोगों की जान-कारी के लिये सांक्षिप्त में कुछ व्याख्यायिकानें उल्लेख की जाती हैं। स्त्री कापट कां पोटली, झूठ का घर, कलहकारिणी और राग-द्वेष की जड़ है। भाई २ को लड़ा देना, पिता पुत्र को अलग कर देना, प्रेम-विच्छेद कराना—फूट पैदा कराना—तो इसके बांधे हाथ का खेल है। कहा है कि—

अन्य संग विसरा जलन है अन्य ओर लोचन संगत ।

विसर्ग हृदय चिन्तना औरहि ऐसी रमणी दुस्त उत्पात ॥

निर्येत पर मन्त्र-निगोद ० में डाल दिया है। व्यन्नाय में तो यह मोरनी में यह यह पर है। मोरनी मीठी बोली बोले पर पर को खाती है, तो यह खोली बोली बोले पर पुर्वात मनुष्यों का प्राण हर लेती है। जैसे मनुष्य बर्तीली भाड़ी में उलझ जाता है वैसे ही इन्द्रिय लोभुष पुरर स्त्री के हाथ-माथ में पंक्त जाता

ह निगोद—अनन्तकादिह—एक निगोद में अनन्त जीव रहते हैं। निगोद के जोर एकेन्द्रिय होने हैं। जैन राजादुसार एकेन्द्रियों का पाँच भेद है। शृङ्गो, कष्ट, अग्नि (तेज) वायु, एवं वनस्पति। निगोद इस ओर वन्याय वनस्पति में ही होता है। जिस वनस्पति में एक दरार में एक ही जीव है उसे प्रत्येक वनस्पति कहा जाता है। जिस वनस्पति के एक दरार में अनन्त जीव हैं उसे साधारण वनस्पति कहते हैं। निगोद का जीव साधारण वनस्पति में है। एक कर्म में नाम कर्म की एक प्रकृति को साधारण नाम कर्म प्रकृति करते हैं, इसी कर्म प्रकृति के उदय से जोर निगोद दरार पाता है। नारको जीवों की अपेक्षा निम्न न्याय से निगोद जीव को जन्म मरणादिक एवं एक दरार में अनन्त जीवों का अवस्थानादि रूप अत्यन्त दुःख जनक होता है, परन्तु मत्त या मूर्धित अवस्था में जैसे दरार में आघातादि अनित पाँड़ा की अनुभूति नहीं होती वैसे ही निगोद जीव को विशेष दुःख होते हुए भी अति दुःख नहीं होता। अनादि कर्म सम्बन्ध से यह सब निगोद में रहते हैं। साधारण दरार में कितने निगोद जीव हैं इसका अनुमान इतने ही से ही सकता है कि इन जीवों में से जीव निरस्त जाते हैं तब मो भूट, अविप्लव, वरान्नामकात में कभी भी एक दरार न खासो हुआ, और न होगा।

निगोद के भी दो भेद हैं। सूत्र एवं बाहर। सूत्र निगोद तो समस्त कोश में भी हुए हैं और बाहर निगोद स्कन्द मूलादि में ही हैं।

है। नारीके नैन तीखे बाणों और वचन माले से भी बढ़ कर हैं, किन्तु जब यह निरखी दृष्टि से देखती है तो वही नैन तलवार का भी काम करते हैं। अन्यान्य शस्त्रों का मारा हुआ मनुष्य तुरन्त ही प्राण त्याग देता है; किन्तु इन शस्त्रों का घायल, मग-याला हो, ज्ञान शून्य होकर, छटपटा २ कर मरता है।

जोंक जिस स्थान पर लग जाती है वहाँ का रक्त पी लेती है, पर हरी जिम्म पुरुष से लगती है, उसका धून घूम, प्राण हीन बना देती है। सच बात तो यह है कि इस ठगिनी से—जो हाथ में जादू का काम करने वाली मेंहरी लगा, नागिन से मय-डूर सिर के वालों को बाँध, तंग चोली से कुच-कमर को कस कर, संसार को ठगने के हेतु निबलती है—बड़ी सत्पुरुष रक्षित रह सकता है जिसने सन्गुरु के अमृत मय सद्गोपदेशों का पान किया हो। नारी नयग्रह से बढ़कर है। अरिष्ट ग्रह होने से कष्ट तथा प्राण नाश की संका रहती है, परन्तु नारी जिस पर मुघ्न हो जाती है नरक निगोद में पहुँचा देती है। बड़े आश्चर्य की बात तो यह है कि इन असार ससार की अनित्यता तथा मोहमाल को जानने हुए भी लोग “फूँडे २ फिस्त है होत हमारे ब्याह” हंसी नुशी के साथ काठ में घेर डालते और नारी रूपी देवी पढ़न कर भी आनन्द के गीत गाने हैं। देखिये! उज्जैन नगरी का हचन्द्र नामक राजा सोमला के ऊपर मोहित हुआ और उसने उस को प्रार कर नदी में बहा दिया। पशोदा ने अपने पति को बिप देकर मार डाला, उसके मृत-शरीर

हार-हाथी के कारण कोटक और बहल कुमार से घोर सम्मान.

राज्याधिकारी हैं और ऐसी अनुमति दस्तुनों से ही राज की शोभा है, अतः आप बहल कुमार से उन्हें ले लीजिये। कोटक के मांगने पर बहल कुमार ने वह कहकर देने में इन्कार दिया कि “वह हार-हाथी पिता की मुँह दे गये हैं, आप जो कैसे दे दें और यदि आप लेना ही चाहते हैं तो मुझे आपरा राज्य बाँट दीजिये”। किन्तु कोटक इसपर राजों न हुआ और हार-हाथी लेने की प्रयत्न इच्छा प्रकट की। बहल कुमार ने जब देखा कि भैंरे भाई के विचार अच्छे नहीं हैं, बहुत सम्मिर है कि वह मुक्त से पत्र पूर्वक आर कर दोन में, ता वह करने वाला राजा सेइक के दाहिं यत्ना गया वह सम्वाद पाते हो कोटक ने दून द्वारा राजा सेइक के पास यह समाचार भेजा कि “दातो आप बहल कुमार को दाहिं भेज दें आपका हार-हाथी मुझे दिना दें, क्योंकि इस हार-हाथी से राज की शोभा है”। राजाने इसके उत्तर में यह कहना भेजा कि “हमारी हाँ में तुम दोनों भाई एक समान हो—दोनों ही पर हमारा प्रेम बराबर है, किन्तु देना अन्याय-कार्य सर्वत्र अनिष्टकर होता है, न्याय की अंगरेजता करना अच्छा नहीं, यदि तुम उसमें हार-हाथी चाहते हो तो आपरा राज्य बाँट देन में क्या जानाकादा करने हो। बिना राज्याधिकार पाये वह रिता-अदृष्ट हार-हाथी मुझे कैसे दे दें?” यह सुनते हो कोटक आप-बहुता हो गया। हृदय में क्रोध की ज्वाला प्रज्वलित हो उठी और तत्पश्चात् एक दून क द्वारा यह कहना भेजा कि “आरे दुए सेइक, घर में दूट पैदा करान्याता, पारस्त्रीक दाह बहुतवाता, नाथन मोच, दातो बहल कुमार का करने दाहिं में निकलत र नहीं ता मेरे साथ समाज कर। कोटक का इस दुह-भावदा की राजा क यह विचार कर क्योंकि कि सरवा-गत की रक्षा करना राजा का कर्तव्य है। राजा बहुत ने करने सहयोगियों से जो इस विचार में परामर्श किया किन्तु सभीने नहीं साथ हो कि दूर के

(१५५५) बैठे हुए बालमोहनत हो—नदिरा-महल पर सवार

एक दिन रात्रि के समय देवती ने विचार किया कि इन बारह सौतों के रहते हुए मुझे करने स्थानों के साथ दिवस-भोग करने का अधिक अवसर नहीं मिलता यदि किनो भोगे हुये मार डालू तो चढ़ेरे मौज बढ़ाऊ । एक समय अवसर पाकर समने करती हूँ सौतों को कुछ दूरा छोड़ दूँ तो फिर देर मार दूँगा । अब समयों के मारदोषात्मक मारी सम्पत्ति की अधिकारियों हूँ और महाशक्त आदक के साथ चौदह प्रधान मनुष्य सम्पत्ति को भोगोभोग, बगल छोड़ा, कतों हूँ आनन्द से दिवस-भोग करने लगी । देवती को नाम-नदिरा जाने-बोने का अमन बड़ा पचा था, वह नाँस लाने को इस प्रकार आती हो गयी थी, जि मयों के राजा अमेरिक के जीव हिंसा (पेरेन्द्रिय जीव का बंधन करने की मनादी लिखा देने पर भी, कुछ रूप से रिता के घर से सेवार्य आने हुए सेवक द्वारा नदिरा-नाँस मंगा कर काटी हो रही । महाशक्त आदक ने करने करने-कर्म का मनीमाँति प्रतिपादन करने हुए एक में चौदह वर्ष व्यतीत किये । अब पन्द्रहवीं वर्ष लगा तो वह मृच्छों का मार करने हुए को सीन, चौबदाला ने हमें के आत्म पर आनोन् होकर दृष्टि से करने-बदल करने लगे । एक दिन देवती हाराव कर मरुस्त हो, तिर के बारह दिगारे, बदन के बंध कोड़े गिराती, बिकाराह का आदक हिने, चौबदाला ने महाशक्त आदक के समीप आया और आन-आदक हाव-भाव दिखाती, अनेकत को कलहें दृष्टों से को श्रुते सपत्ति—दे अनेकशक्त महाशक्त ! अब पुरन, स्वर्ग और मोक्ष के इच्छा यदि आन सदा सब चाहते हैं तो इस दम, दम और तर में दूरा अर्थ परिष्कन कर बाग को बंध क्यों देते हैं ? परिष्कन ही से सब चाहते हैं तो कुछ मिला की प्रति सम्पादन में परिष्कन कोहिने । दिवस में साथ मोक्ष-विज्ञात निने धर्म, पुरन, स्वर्ग और मोक्ष का साथ प्रप्त न कर लवोने । अब बालमोहनत आदकों की कर्म-बहु मारा को इन कर भी मरुस्तक मारक

की सम्मिलित रिती यह ने देखा था। इस बार समुद्र की मूछा टूट-

२। यह बात से आकर अपने पति के पत्र पर दुःख से भर गयी। और थोड़ी देर बाद उसे ज्ञान कर कहने लगी कि "आज मैंने एक बड़ी विचित्र बात देखी, आरके पिताजी अभी यहां (दम्पत्यार में) आने से और मेरे पैर का आभूषण उतार ले गये हैं, मैं समझ-बूझ उनसे कुछ नहीं कह सकी। मेरा अनुमान है कि वह मेरे ऊपर कोई बुरा अभिप्रेत लगावेंगे। मैं नहीं जानती कि वह मुझ से क्यों इतना घात-घात है। वह तो आरघ्य ही मेरे ऊपर बुरा दोषारोप्य करेंगे, किन्तु सावधान आर उनके बदकामे में न आइयेगा"। आरकात होने ही उनसे ने अपने पुत्र से उसकी बात को कहकर बड़ी और दूर दृष्टिमान। पुत्र का कान तो पहले ही से कुछ रिना गया था—युद्ध विद्रोह ने सुनी द्वारा मारे शरीर में करोड़-करोड़ दण्ड की कमी पैदा हो गई थी, उसने कहा पिताजी "आर तो मरिवा गये हैं, आरकी बुद्धि मारी गयी है, आर पर पत्थर पड़ गये हैं। बतलाइये, आर एक नार्क हो यह सब बनाइये आर क्यों रपते हैं, मेरी पतिव्रता स्त्री को मूछा कतक क्यों लगाते हैं? आर ही कहिये कि जहां पर पुत्र अपनी स्त्री के साथ दम्पन करता हो, वहां पर आरका आना चाहिये? अब आर उसके पैर का आभूषण निकाल रहे थे वह आगतो थी, बेचारी हर्षिता सभा के मारे आर से कुछ न बोली। वह तो आर के इस कार्य से सहित हो गया किन्तु आरको धर्म न आया। पिताजी! आर की इस बात का हास तो उसने दुरन्त ही कहा था। मैं आपसे शर के साथ कहता हूँ कि मेरा स्त्री हर्षिता, पतिव्रता आर निष्कल है। आर निरर्थक ही उससे मूछा दोषारोप्य करत है। पुत्र को ऐसी बातें सुन कर देवदत्त चकित हो गया और अपना सा मुँह सेवर रह गया। अब वह ने भी समुद्र पर उतरा धरा बांधना आरम्भ किया, वह करने लगी कि समुद्र को इस बात से मेरा क्या सम्बन्ध हुआ है, मेरे मुख पर कतक की आलिंगना लग गयी



मेमो निन्दित नागियां बुध बनो पौ त्यागनी तर्जना,
धर्ता के दल पै पड़ी मटकियों के तुल्य, दुःखदा ॥

रिद्धियों त्यागन से कभी सिलसिला बटती है, कभी फूट-
फूट कर रोजे लगती है, दूसरे को अपना दिग्धास पला देती है
एकतु स्वयम् किसी का विन्यास नहीं करती । इस लिये बुद्धि-
मानों को श्मशान भूमि में रखी हुई हड्डियों के समान स्त्रियों
को त्याग देना चाहिये । सुदर्शन रोठ एक मास में बार
घोसह करने और रात को अशान में जाकर सोने थे । धर्म-कर्म
में राखदीन रोठ कपजीक गुपात्र शानादिक शुभ कार्यों को करने
हुए सुय के साथ दिन अनीन करने लगे ।

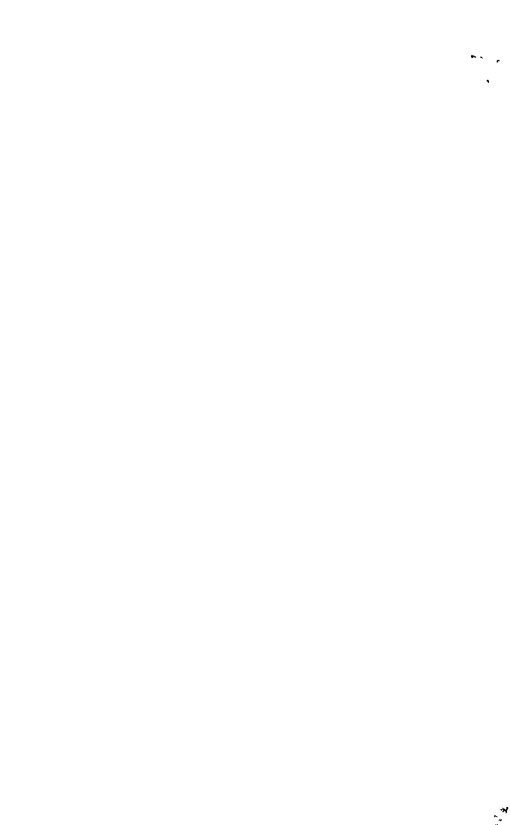


तीसरा अध्याय

अभयाका कुविचार और धायकी शिक्षा ।

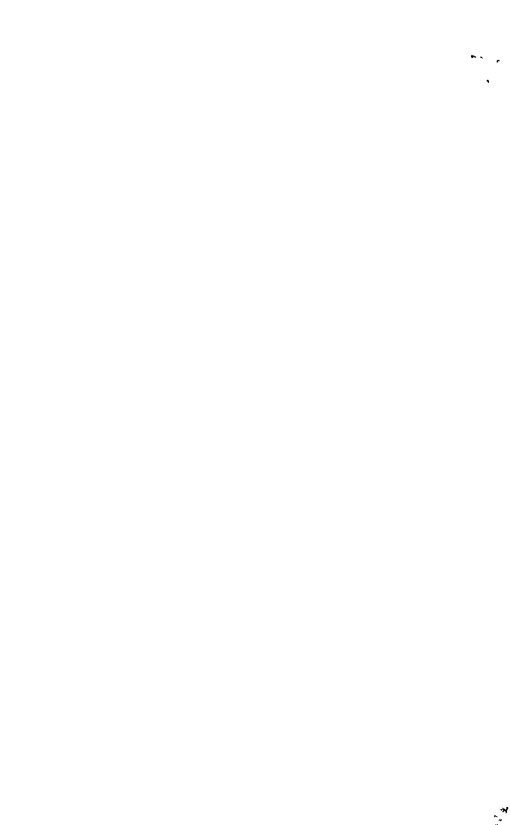
घाटिका विहरण ।

धात्री बाहन राजा को समझा पट्टानों, बड़ी रूपवती, चन्द्र-
 षट्पत्तियों, मृगनयनी और लावण्यता में सुरङ्गनामों से कुछ
 कम नहीं थी। यह संसार की विषय-वास्तवताओं में ही दार्शनिक
 सुख समझ, आनन्द से दिन बिताती थी। चम्पा नगरी के ईशान
 कोण में एक सुन्दर रमणीय उपवन था, यों तो वह सदैव ही
 हरा-भरा तथा फूला-फला रहता था, किन्तु दस्तन्त शत्रु में उसके
 वित्तारकर्तृक गुण और भी बढ़ जाते थे। उस परम रम्य घाटिका
 में नगर के रत्नों-पुरष सभी आनन्द-प्रसन्न कर नेशों का मुख उप-





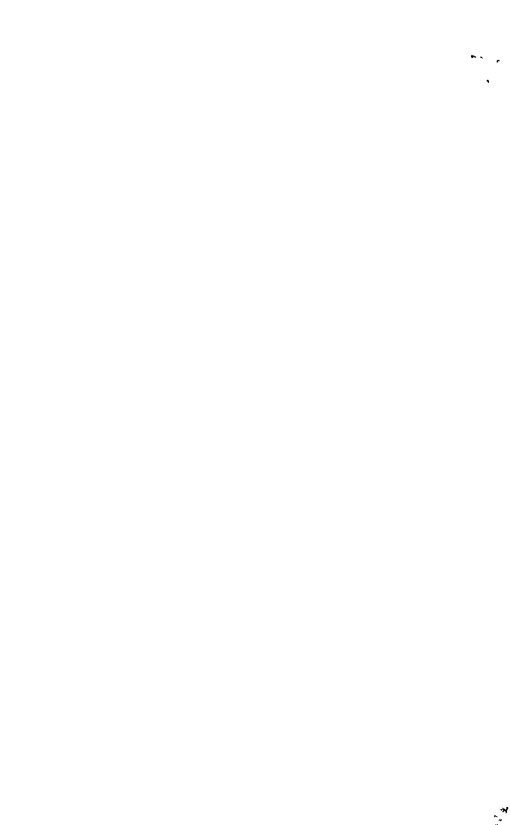




कर रक्षा में उचित नहीं समझती। यद्यपि धर्म यही तत्त्व पूर्ण है तथापि तुम से कौन सा ज्ञान नहीं बनता। धर्म! मेरा विश्वास है कि कार्य को तुम से गोपन रहना ही उत्तमोत्तम रहता जो उपेक्षा की दृष्टि से देखना है। अस्तु! तुम से ध्यान पूर्वक तुमों और मेरे अनिष्टों को पूर्ण करो। मैं यज्ञ के साथ उपवन में चलन शुरु देखने के लिये गया था, यहां पर चला गया तो तमों कायाल-मृद-शक्ति यही सदा-धर्म के साथ पधारें। बड़े २ सैठ-साहूकार तिजारी-सामान्य धर्म धर्म पुराने का अनवष्ट धर्म, किन्तु अनेकों को नतोपना तथा पुराने के लिये नापे हुए सैठ सुदर्शन को समझा करे नहीं कर सका। चन्द्रना के उदय होने पर लहरों की जो दशा हो जाती है, ठीक वही दशा सुदर्शन सैठ के अवलोकित रहते में अन्य श्रेष्ठ पुराने की थी। उनका दिन शरीर बड़े बड़े मेरु, शीतल, विज्ञान बल-सह, धर्म का सा प्रकाश चन्द्रना की सां शीतलता और सुन्दर की सां शीतलता ने मेरे हृदय को बलात् अपने आ में कर लिया। है माता! उत सुन्दरता लावण्यमय रूप में व अनेकों की शक्ति भरी थी जिसने दर-परे ने न न हो पावे लिया। उत हील के बगि बड़े २ राक्षस-राक्षस नष्ट करते हैं। मेरा नम्र उत्तम लग गया है। मैं यह दिन उनके मिलने का उपवास तोषा करता हूँ। जब से मैं उन्हें देखा मेरे भूत-भूत हर गये, कितां हस्त में ही नहीं लगता, न कुछ अच्छा ही लगता और न कुछ सोचता ही है। कितां की बात अच्छी नहीं लगती, कितां उच्छ













आयी । प्रथम तो सेठकी सुन्दरता देख उसकी टक-टकी बण गयी, मोह में मुग्ध होकर कुछ देर के लिए चित्र की भाँति उषों की स्थिति निर्निमेष खड़ी रही, मानो—“देखि लाग मधु कुटिल-किरानी, जिमि गंय तके मेडं केहि भाँती”—सेठ को प्रेम-याश में फाँसने की क्रिया सोचने लगी । तदुपरान्त रानी मधुर स्वरों से नम्रता पूर्वक इस प्रकार बोली:—“ध्यारे ! मैं अमया रानी हूँ, आप से मेरा मन लग गया है । एतद्दर्थ मेरी धाय आपको यहाँ ले आयी है । कृपया शुभ काम-मिथ्याचिन्तों की मनोमिलाना पूर्ण कर, मेरा मानव जीवन सफल कीजिये । आप मेरे लोलिये और देखिये कि जिस सुख प्राप्ति की इच्छा से आप यह कठिन तप-स्या कर रहे हैं वह सुख आप को यहीं प्राप्त हुआ है,—पूर्व जन्म की पान कौन देख आया है, जो कुछ है सब यहीं है । अतएव मेरी प्रार्थना है कि लहलहाती हुई काम-यात्रिका में पिहार करने हुए जयानी के जोरा में भरी हुई निम्न-भारणियों का आनन्द मूढिये । देखिये:—

कोमलता कबने गुलाबने सुगन्ध ले के,

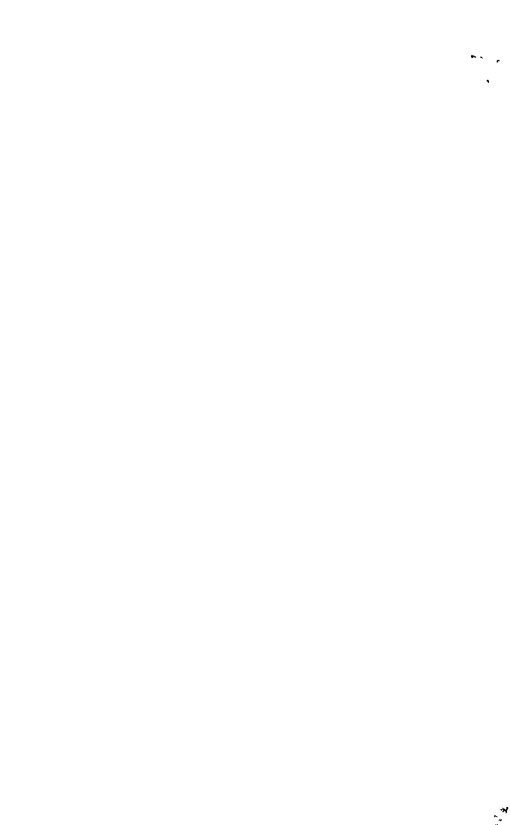
चन्दते प्रकाश कियो उदित उबरे हे ।

रूप रति धाननते चातुरी सुवाननते,

कीर ले निगननते कौतुक निबरे हे ।

गनी कहत ने मसानो गिधि कारीगर,

रचना निहारी बन होत पित चरे हे ।



हे । मन्त्रा इमं यन्त्रिभिरुप मोक्षणीयं कर्म के यज्ञः में पड़ कर—
कर्मिण उगिरु सुभ के लिये— मैं अपने सुभ भूल जिन धर्म के
निदानों को केने छोड़ सकता हूँ । फिर भी इस भोग विद्या
की मूलभूतता से क्या लाभ जिन में कि:—

य वातु कामः कामानामुभागेन साध्यति ।

हविषा इत्यन्तर्येण मूल एवामिषवर्धने ॥ ।

‘अर्थात्— विद्या भोगने से विद्या की कामी भी शान्ति नहीं
होती, किन्तु अग्नि में मूल डालने से जिस प्रकार अग्नि की अग्नि-
वृद्धि होती है, उसी प्रकार काम की भी वृद्धि होती है । एवम्
कर्म विद्या कर उन्होंने अपने मन को दृढ़ कर दिया और समस्त
कामी को कामने लगी हुई हैं। श्रीभक्त के गुणों का विवर्णन
करने लगे । अहमकारों एक ऐसा कहा गुण है कि इसका योग्य
करने करने से दूसरे सब गुण स्वयम् ही उत्पन्न हो जाते हैं ।
आत्मानी पुनः के लिये कार्य की काम, कोई भी मित्र, कौनसा
भी शत्रु दुष्कर नहीं है । वह सबे या कर्म से कर्म करणों
को भी पूरा कर सकता है । अन्त में किता है

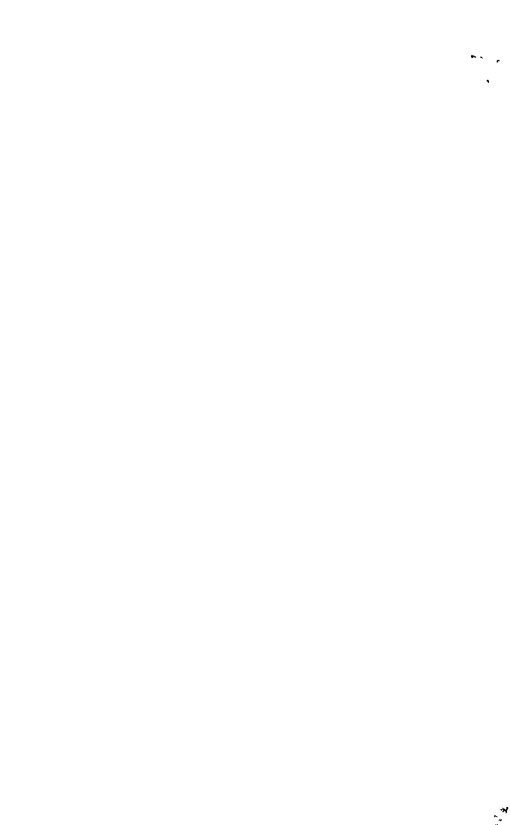
“हेतुः सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं”

सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं

अर्थात्—सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं
सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं
सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं



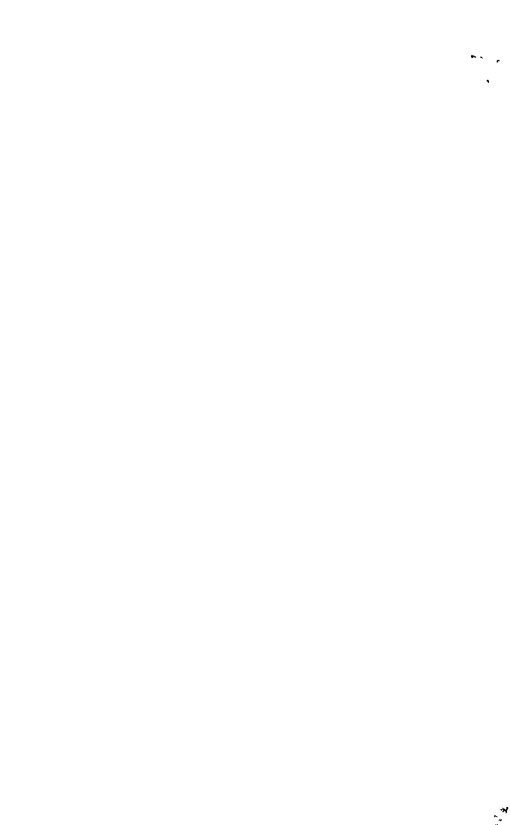






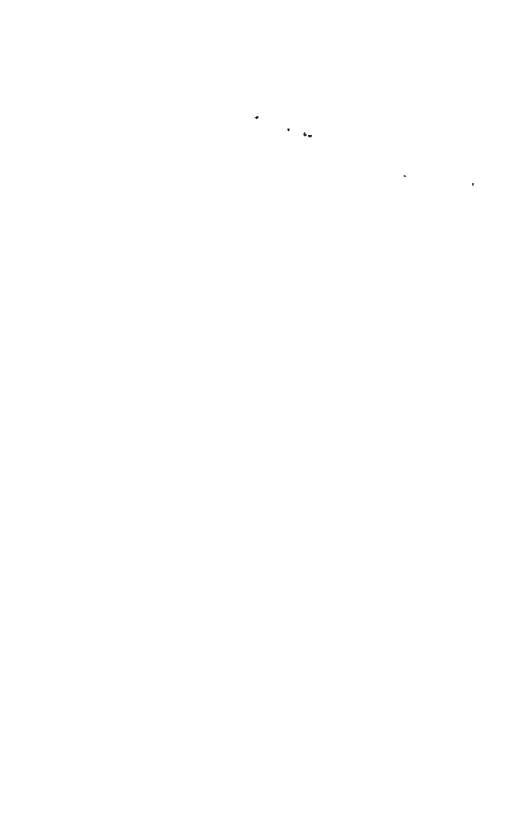


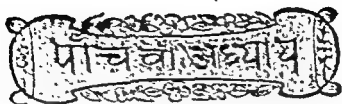




गौरव से भरे हुये शान्त बचनों ने मनोरमा के मन को शान्ति प्रदान की । फिर मनोरमा ने कहा कि हे-प्राणनाथ ! आप कर्म-क्षय की तपश्चर्या करने जा रहे हैं मगः किसी प्रकार की चिन्ता न करना, कैयली सब भाष जानते हैं ।- देखो पूर्ण संचित कर्मों के प्रभाव से व्याकुल होकर कहीं अनिष्ट कल्पनाओं को हृदय में स्थान न देना और जिनेश्वर भगवान् के सचे धर्म पर डटे रहना इत्यादि सत्परायणों द्वारा अज्ञांकिनी मनोरमा ने अपने कर्त्तव्य का पालन किया ।



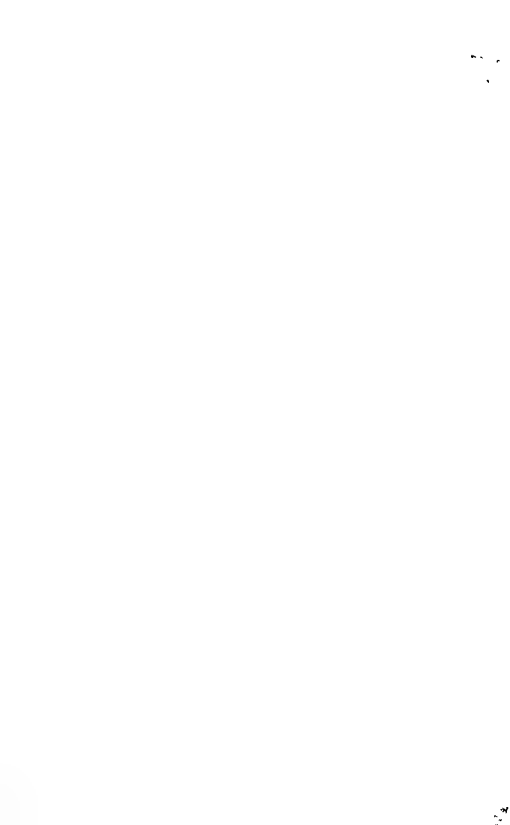


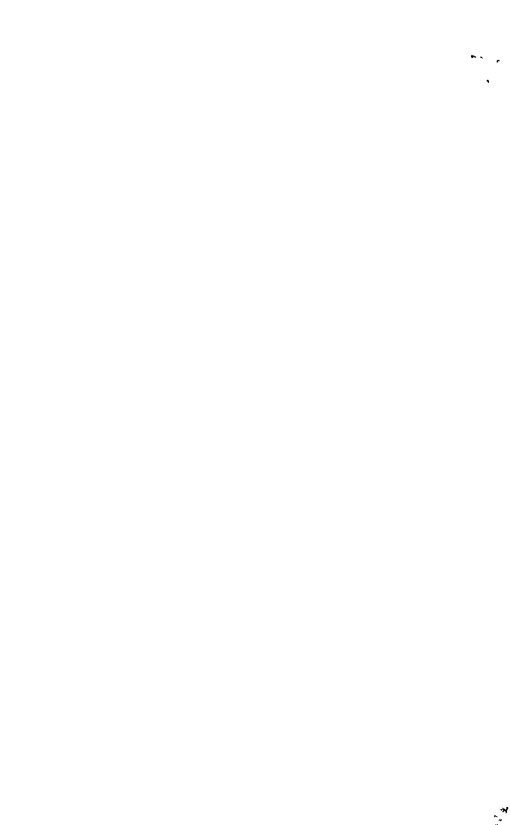


मनोरमा का अभिग्रह और शूली का तिहासन ।

अभया रानीका प्रसन्न होना ।

मनोरमा ने माल में आकर ध्यानावस्थित हो यह अभिग्रह धारण किया कि जब तक सेठ सकुशल गृह आकर मेरा ध्यान पूरा न करावेंगे तब तक जायजोपन आहार-पानी का त्याग है । फिर मनोरमा ने पैसा दुप्पर अभिग्रह धारण किया उधर सेठ को लेकर राजदूत आगे बढ़े । यद्यपि सेठ के दुःख से प्रजा दुःखी थी, तथापि दुःखोन्मूलन में अतनय रही । अभया रानी रंगमाल के ऊपर बड़ी हुई सेठ की बुरी दशा पर हर्षित हो रहीं हैं, मन में सोचती हैं कि हमारी भाइया की अग्रहेलता करने का ही फल है, जो भाइ इतना प्रतिष्ठित सेठ होकर भी साधारण नौकरों द्वारा प्रतिहत हो रहा है । इसने समझ नहीं की यह





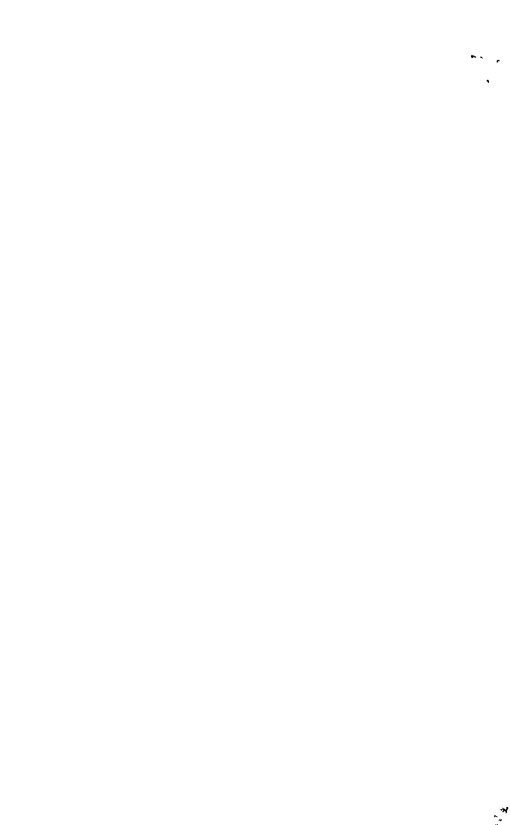


हार की छात्रा नियाली थी। सिंहासन का तिलर तिर्यमणि समतांगत का दोरक धन कर मन को मोहित कर रहा था। ऐसे देव-निर्मित रत्न-जडित सिंहासन पर आसीन होने ही, देवताओं ने सेंट सुदर्शन को बान्निज्य द्रुमुत्पन्न धन्वाभूषणों से सुसज्जित किया और इन्हीं देने के समिप्राय से निवृत्तायम्बित गेयकों को मार भगाया। राजदूतों ने उत्पोंड़ित हो, राजा के समीप आ सेंट की समस्त बातें ज्यों की त्यों कर सुनायी।

राज सेना का थावा।

यह समाचार पा कर राजा का क्रोध और भी बढ़ गया, उन्होंने ने पिता उत्तका भेद भाव जाने ही—क्रोध के पराभूत हो—सेयकों को आज्ञा दी कि शीघ्र चतुरंगिनी सेना तय्यार करो। राजा तत्काल ही गजारेही हो, चतुरंगिनी सेना साथ ले, बड़े २ शूर सामन्तों को आगे कर कूच का डंका बजा कर चले। महा धनघोर शब्द करती हुई सेना चल पड़ी और बन्दीजनों ने जयजय-कार के तार धान्य दिये। सेना के धिक्क धीरों का सिंहनाद और जयजयकार निश्चित घोर स्व ने चम्पानगर नियासां नर-नारियों के हृदय में एक नयोन कात्तूल मचा दिया। सुहृत्कारियां भयेतां से भागने लगीं, कापरो का फलेजा कांपने लगा और बालकों के भ्रूण दहन हुम्दला गये। उस समय सभी के चित्त चिन्तित हो उठे कि हाय! यह कैसा उपद्रव होने लगा।

नगर के बाहर जा, दूर से ही राजा ने देवताओं की सेना



“अरे मूढ़ ! घादीवाहन राजा, निर्दण्ड, काली अनापदया का जना, पानो, अकालशी काल के माल में जाने वाला, क्या तेरी हिचे-कसर की फूट गयी ! तुझे सूचना नहीं है ! तू ने शोल-ग्रन धारक, महा गुणवान, ऐश्वर्यवान, सेठ सुदर्शन को गूली देने का तय्यारी की है और ऐसे सत्पुरुष को कानलोलुप सनभ रखा है । तू अभी सेठ के अवगुणों को घना, नहीं तो अपनी धर न सनभ । देव राजाः—

गरत्या पराधेन परेषां दरडनाचरेत् ।

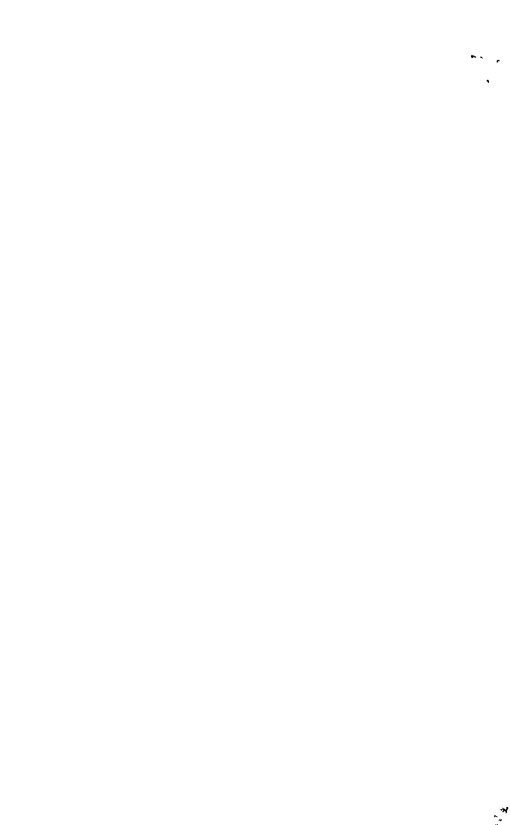
मालनाशनं इत्ता बन्ध्यायादुपदेव वा ॥

अर्थात्—किसी की बहकाने से दूसरे को दरड न देना चाहिये । मारने और सन्मान करने के पूर्व अपने आप मली-भांति उसकी जानकारी कर लेनी चाहिये । तू ने अपनी हठी की बात मान कर सेठ को व्यभिचारो छरपाया और गूली का हुक्म दिया । न्यायी को बन्ध्या और बन्ध्यामी को न्यायी सनभ । “उल्टा चोर कोनवाल को हटै” वाली कहावत यादगर्क कर अपनी दुष्ट भावों के अवगुणों पर ध्यान न दे, सेठ को ही मुल्लिम बनाया । इसके पछान् घाय जैसे सेठ को महल में लायी और रानी ने पानना पहुंचायी, देवताओं ने उनकी सारी कष्टत राजा से कह सुनायी । रानी की सारी राम कहानी सुन, राजा का जी फट गया और दुःखित हो विचार करने लगे कि देखो, रानी ने मुझ से कहा था कि मैंने बड़ी कठिनाई के साथ सेठ से अपने

सेठ का गुणगान करते हुए देवताओं ने राजा की मूर्छित सेना को सचेत कर दिया और ब्रह्मचर्य के महत्त्व की प्रशंसा की। सुदर्शन सेठ की महिमा सुन, नगर निवासी आह्लादित हो उठे और उनके हर्ष का चारापार न रहा। तदनन्तर देव-प्रद रक्षाभरणों से सेठ का अंग-प्रत्यंग प्रच्छन्न होगया। अमृत फेन के समान उनके उज्ज्वल दुकूलों की छटा निराली लिट्क रही थी। दोनों भुजाओं में धारण किये हुए बाजूबन्दों से मालूम होता था कि मानो चञ्चला लक्ष्मी को बांध रखा है। देवताओं ने बड़ी धूम-धाम के साथ सेठ का महोत्सव किया और अनेकानेक भाँति से यश गान के पध्दान् वह जिस मार्ग से आये थे उसी मार्ग से चले गये।

राजा द्वारा सेठ का महोत्सव।

देवताओं के चले जाने के पध्दान्, राजा ने सेठ के महोत्सव करने की मन में ठानी और सेवकों को बुला कर आज्ञा दी कि तुम लोग अति शीघ्र चम्पानगरी को सजाओ, गगन-स्पर्शी प्रासादों में ध्वजा-पताका उड़ाओ, हर्ष की दुन्दुभी यज्ञाओ और सारे नगर में उद्यस्वर से महोत्सव का मूल कारण कह कर प्रजा को प्रसन्न करो। सेठ की सुभाष्या मनोरमा से इसकी बधाई हो और चतुरंगिनी सेना तय्यार कर, पट हस्ती को सजा कर यहाँ लाओ। सेवकों ने राजाशा का अविलम्ब पालन कर राजा को जनाया। राजा ने सेठ से विनम्र हो प्रार्थना की "आप का महोत्सव करने के लिए मेरा मन लालायित हो रहा है। मैंने









के खेल की भांति जाता रहूंगा । मतएव श्रीजिनेश्वर भगवान् के बनाये हुए धर्म में अनुरक्त हो कर्मों के बन्धन को बमशः शिथिल कर, क्योंकि इस कर्मपाश को काट कर मुक्त होना ही जीव का एक मात्र कल्याणकर कर्तव्य है । ऐसा मानव शरीर पाकर जिसने सच्चे धर्म, देव, गुरु को पहिचान कर, उसमें भ्रष्टा न की उसने अपना जीवन व्यर्थ ही खोया । अतः अब मैं गृह त्यागी बन, पंच महाव्रत को पाल, बारह मेशों से तपस्या करते हुए इस रहस्यमय जगत् के जालों से निकल कर, संन्यास के उत्तुङ्ग पथ पर चढ़ चलूँ । इस प्रकार शिव-पथ के आनन्द का अनुभव करते हुए, सुरार्जन सेठ के इदपोद्यान में वैराग्य का पुष्प-प्रस्फुटित हो गया और उन्होंने मन में ठान लिया कि अब जब साधु मुनिराज यहाँ पधारेंगे, संसार को छोड़ कर संन्यास ग्रहण करूँगा । उसका धर्म पर ऐसा दृढ़ प्रेम वैराग्य पर अटल अनुराग—गुरु पर के चन्द्रमा की भांति बढ़ती ही गया ।

साधु-दर्शन ।

कुछ कालोपरान्त बार ज्ञान के धामी साधु मुनिराज बिचरते हुए, कतिपय साधुओं ■ संग धम्यानगर में पधारे । बन-रक्षक ने सेठ सुरार्जन को यह सुसम्वादि आकर सुनाया और वे बड़े प्रसन्न हुए । सेठ प्रसन्न बदन हो, मन में सोचने लगे कि, आज मेरा बड़ा सौभाग्य है, अब शीघ्र चल कर साधु-दर्शन का काम उठाऊँ और अपना मनोरथ सिद्ध कर जीवन को सफल बनाऊँ । इस प्रकार

अतिशय प्रयत्न करते रहना चाहिये, क्योंकि गया हुआ समय फिर हाथ नहीं आता। इस प्रकार उनकी धर्म-पीयूष-धारा से पापी-तापियों के मलमय-हृदय विशुद्ध तथा हरेभरे हो गये और उन्होंने धर्म के तत्त्व को पहिचाना।

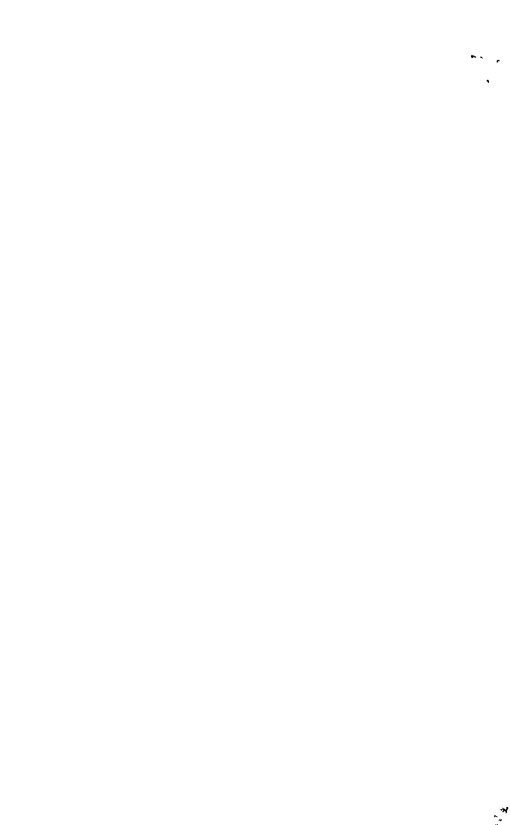
सुदर्शन का पूर्व भव ।

तदनन्तर नेत्र सुदर्शन ने विनम्र भाव से करजोरि प्रार्थना की—“स्वामिन् ! मैं पिछले भव में कौन था, अनुग्रह पूर्वक यत्नाइये”। साधु मुनिराज बोले, “सुदर्शन सेठ यदि तेरी ऐसी इच्छा है तो मैं तेरे पिछले भव की यात यताता हूँ, उसे ध्यान पूर्वक सुन”।

“पिन्ध्याचल पर्वत पर एक दुष्ट भौल रहता था, संयोगवश वह धर्म-ध्यान करता हुआ मृत्यु को प्राप्त हुआ और गोकुल ग्राम में—गूजरों के महत्ते में—जाकर हुआ। गूजर के संग घूमते घूमते एक दिन उसे साधु-दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। साधु को देख कर ध्यान का शुद्ध परिणाम आया और वह आयु पूरी कर, उसी नगर निवासी एक गूजर के गृह में जन्म ग्रहण किया। यह तुम्हारे दूतरे भव का घृत्तान्त है। गूजर (तुम्हारे पिता) के घर में गायें, भैंसें बहुत थीं। यह नित्य गायों को चराने के लिए हरे-भरे जंगलों में जाया करता था। एक दिन तुम गायों को चराने के लिए गये। संध्या समय जब तुम जंगल से घर वापस आये, एक निर्जन





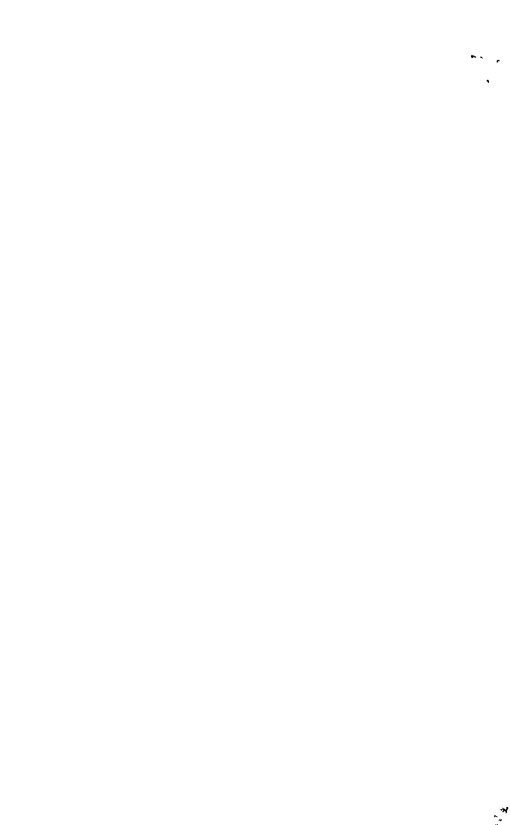


स्वयं को न सम्भाल सकने के कारण मूर्च्छित हो घरायायी हो गयी। कुटुम्ब-परिवार वाले भी यह समाचार पाकर शोक-सागर में निमग्न हो गये; वंश-देविके माधारस्तम्भ सेठ के उत्त विनोग वाश्य ने उन्हें शुष्क बना दिया और सब के सब व्याकुल हो सोचने लगे कि 'हाय ! सुख में यह दुःख कहां से आया, इस मनोरथ के फलते हुए वृक्ष पर यज्ञाघात कैसे हुआ ! कुछ देर बाद मनोरथ को कुछ ज्ञान हुआ और उसने सोचा कि अब मैं चकोरी, उस चन्द्रानन के देखे पिता कैसे जंजंगो ! यत्न इतने हो मैं फिर मूर्च्छित हो पृथ्वी पर गिर पड़ी। उस समय दुर्निवार और दुर्गम मोह के प्रलयकारी वेगने मनोरथ को भविष्य चित्तको भी चंचल बना दिया। सुदर्शन सेठ उनके विक्षिप्त देख, मोह जाल में पड़ी हुई जान, इस प्रकार उपदेश देने लगे—

‘देखो इस जीवन धन का काल-चोर सदैव तिर पर खड़ा है, न जाने कब लूट ले जाय। एतन्व जाते हुए जीव के मार्ग में फंके होता सचे कुटुम्बियों और हितैषियों का कार्य नहीं है। सांसारिक कार्यों में लित रह कर वास्तविक आनन्द का अनि-सारी बालू को ढेर कर लेल निकालना चाहता है। तेरा मेरा और मेरा तेरा यह सब कर्तों का ही भाग्यजाल है। इन्हीं प्रपंच में पड़ कर यह एवेन्द्रियां भी सब को रंत बना देती हैं। जैना

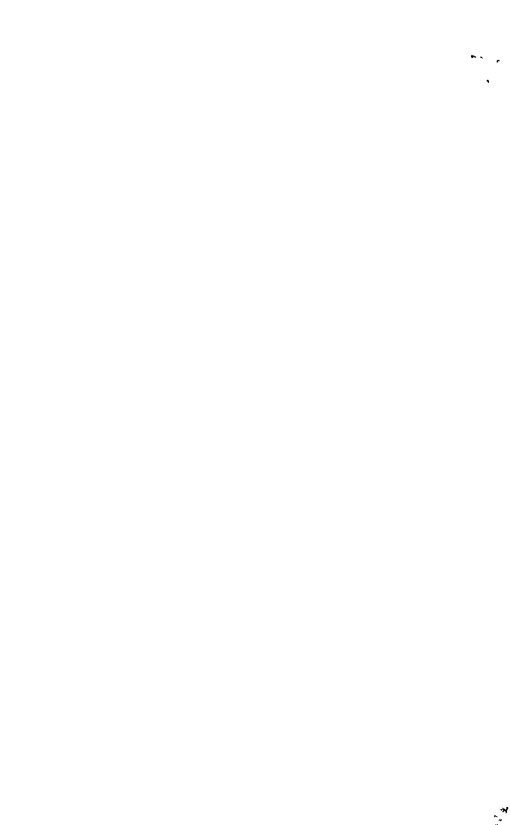












बल पूर्वक पर्यटन पर लौट ले गयी। बाग के मध्य से मद्यमाती गणिका पहले तो अपने दहिने कर पर कपोल रख, तिरछी दृष्टि करते फगदियों से देखने लगी, फिर कभी पाणि-पल्लव नचाती, कभी सीने पर हाथ रख सौत्कार करती और कभी भाँजों का अर्धरात्री स्तब्धित पवन पोलती थी। किन्तु आनन्द मय पंचन के सरोवर में सरापोर होने वाले साधु सुदर्शन अपने शुद्ध जीवन काल में ही (गौल-व्रत के विश्वविद्यालय में परोक्षोद्दीर्ण होने के पूर्व ही) अव्ययन पर बुके थे कि—

अन के रज में प्रति हार ज्यों, रम के हित अरिष पशुगत है।
निज शोचि चारुत मोद भगें, पर गेहु सिरेक न लागत है।
गर हू बनित तन गेवन ते, तनिकों न कभू मुल पारत है।
निज देह परिधन के निमने, मुन की तठ भावना भागत है ॥

सतजन हल विठा-भूत और दुर्जन्य का गुस्ता, धर्म-ध्यान में पाधा पहुंचानेवाली, लोगों की चिडचिडावट, नरक निगोद में ले जाने वाली कामिनी से तदैव साधवान रहना चाहिये। यह दुर्लभ मातृव अन्न पाकर आनन्द मय मुनि के मार्ग का अवलम्बन करता ही एकलान मार्ग है। हलाकि यों सोच के ध्यान मत हो पर्यंत के कृतान निष्ठल हो रहे। सोच का सोच पांच लगते ही गल जाता है, किन्तु मार्ग के मोठे को जितना ही तपाया जाय उतना ही वह सदा सौत मजहूत होगा जाना है। ठीक वही दत्ता साधु सुरता का हूँ, जो २ उन्हें कष्ट मिलने लगे हों २ दे

जुलान में चले गये और साधरी दिवा, साएस दूर्धक, साय
स्वर्ग करने दगे ।



